भारतीय चिंतन परम्परा में राजनीतिक कसौटी

अमरजीत
राजनीत विज्ञान बिभाग,
दिल्ली विश्वविद्यालय

प्रज्वल यादव
स्वतंत्र शोधार्थी,
दिल्ली स्कूल ऑफ़ इकोनॉमिक्स

सार तत्व

यह लेख आधुनिक भारतीय राजनीतिक सिद्धांत के विकास में अर्थशास्त्र व महात्मा गांधी के योगदान की पड़ताल करता है। अर्थशास्त्र भारतीय राजनीतिक सिद्धांत की कालजयी रचनाओ में से एक है जो सहस्राब्दी से अधिक समय तक फला-फूला, लेकिन उन्नीसवीं शताब्दी में औपनिवेशिक राज्य द्वारा भारतीय राजनीतिक सिद्धांत को विलुप्त होने का सामना करना पड़ा।[1] बीसवीं शताब्दी में गांधी ने पश्चिमी सिद्धांत के प्रभुत्व को चुनौती देते हुए भारतीय शास्त्रीय सिद्धांत में विद्मान अप्रचलित विचारो को हटाकर व्यवहारिक विचारो को संरक्षित करने का प्रयाश किया | औपनिवेशिक शासन के पश्चात आधुनिक भारतीय विचारक भी चाहे उदारवादी हों या मार्क्सवादी लिखना प्रारभ किये कि भारतीय सिद्धांत कभी अस्तित्व में था ही नहीं। लेकिन मोहनदास करमचंद गांधी ने पुराने भारतीय सिद्धांत को आधुनिक बनाया जिससे भारतीय विचार को एक राजनीती कसौटी प्राप्त हो सके। यह लेख इस संबंध में उनके उपलब्धियों का आलोचनात्मक परिक्षण है। यह पुराने सिद्धांत के संक्षिप्त विवरण से शुरू होता है और वर्तमान चर्चा के लिए आवश्यक पृष्ठभूमि प्रदान करता है।

मौलिक शब्द ; *गाँधी,अर्थशास्त्र , राजनीतिक कसौटी, तुलनात्मक राजनीती*

किसी भी राजनीतिक संस्कृति की अपनी सैद्धांतिक कसौटी(canon) होती है | व राजनीतिक सिद्धांतों में समयबद्ध परिवर्तन किये बिना लंबे समय तक प्रासंगिक नहीं रह सकता क्योकि सिद्धांत, स्थिरता और परिवर्तन के बीच एक सूक्ष्म लेकिन वास्तविक संबंध को राजनीतिक सिद्धांत के माध्यम से दर्शाया जा सकता है | इसे प्रासंगिक बनाने के लिए परिवर्तन की आवश्यकता को व्यवहार के रूप में देखा जा सकता है। हालाँकि, मध्यकाल की भारतीय संस्कृति में मोक्ष परंपरा की प्रधानता के कारण पुराना राजनीतिक सिद्धांत आगे विकसित नहीं हो सका। यह मामला चौदहवीं शताब्दी के बाद भी बना रहा, जब मुस्लिम शासन के तहत भारतीय क्षेत्रों में शरियत को एक नये राजनीतिक सिद्धांत के रूप में पेश किया गया | आधुनिक भारतीय राजनीतिक विचारक भारतीय मार्क्सवादियों सहित भारत के राजनीतिक मुद्दों जैसे- एतिहासिक सैद्धांतिकी , उपनिवेशवाद, राष्ट्रवाद, आत्मनिर्णय समाजवाद ,वर्ग युद्ध ,व्यक्तिगत स्वतंत्रता, समानता और कई अन्य मुद्दे के बारे में लिखा। लेकिन भारतीय राजनीतिक विचार का प्रतिपादन नहीं किया | इन लेखकों द्वारा नियोजित विचार और विश्लेषण का ढांचा सामान्य रूप से या तो उदार या मार्क्सवादी था। वर्तमान समय में हमें भारतीय राजनितिक कसौटी में पुराने विचारो को जोड़ना होगा जो असान काम नहीं है। लेखक या लेखकों की जादूगरी को समय की जरूरतों के अनुरूप जवाब देना होता है। भारत भाग्यशाली था कि उसके पास कई महान

[1] Romila thapar (2002).*early india : from the origine to AD 1300.* New Delhi : oxford university press.184-185

लेखक थे जिन्होंने एक आधुनिक भारतीय राजनीतिक सिद्धांत को उजागर करने की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इनमें रवींद्रनाथ टैगोर, बीजी तिलक, श्री अरबिंदो, एस राधाकृष्णन, जवाहरलाल नेहरू, मौलाना आजाद और बी. आर. अम्बेडकर शामिल थे। हालाँकि, सभी तत्वों को एक साथ और आधुनिक भारतीय राजनीतिक सिद्धांत का उद्घाटन करने वाले विचारक महात्मा गांधी जी थे।

इस बात से कोई गुरेज नहीं कि गांधी पुराने भारतीय राजनीतिक सिद्धांत के एक नव प्रवर्तक बनना चाहते थे जिसके लिए वे भारतीय राजनितिक सिद्धांत में अव्यवहारिक चीजो को दूर कर व्यावहारिक चीजो को जोड़ने तथा इसे संरक्षित करने के लिए सदैव प्रयासरत रहे। उन्होंने लिखा था कि मेरा स्वराज हमारी सभ्यता की प्रतिभा को अखंड रखना है मैं बहुत सी नई चीजें लिखना चाहता हूं लेकिन वे सभी भारतीय स्लेट पर होनी चाहिए। मैं पश्चिम से उधार तब ही लूंगा जब मैं उचित ब्याज के साथ राशि वापस कर सकू। वह खुद के विचारो को अपने पूर्वजो के परम्परागत कुए में पूर्णता डुबोना नही चाहते थे गाँधी जी का मानना था कि अतीत की सभी विचारो को पूर्णता संरक्षित करना वास्तव में आत्मघाती होगा। नवप्रवर्तक का कार्य अतीत की विरासत को बढ़ाना और उसे प्रासंगिक बनाना होता है। गाँधी जी के अनुसार यह हमारा कर्तव्य है कि हम अपने पूर्वजों की व्यवहारिक विरासत को आगे बढ़ाएं और इसे वर्तमान सिक्के में बदलने के साथ आज के लिए स्वीकार्य बनाएं पुराने राजनीतिक सिद्धांत को प्रासंगिक करने के उनके प्रयासों को इन भावनाओं के आलोक में सबसे अच्छी तरह से देखा जाता है। जैसे राजशाही और जाति व्यवस्था से संबंधित विचारों को पुराने सिद्धांत से हटा दिया गया था तथा राजनीतिक शक्ति का अर्थ विस्तार करना, जीतना और वश में करना है की जगह राजनीतिक शक्ति केवल आंतरिक व्यवस्था और बाहरी सुरक्षा के उद्देश्यों के रूप में परिभाषित किया गया | सामान्य रूप से गांधी के राजनीतिक सिद्धांत अहिंसा ने राजशाही से गणतंत्र में भारत के संक्रमण में बहुत योगदान दिया। राजतन्त्र की समाप्ति शांतिपूर्ण तरीके से हो गई। जिसके लिए गृहयुद्ध, क्रांति या विद्रोह की आवश्यकता नहीं हुई। बीसवीं सदी के मध्य तक, राजाओं और महाराजाओं को पेंशन दी गई और उनके क्षेत्रों को गणतांत्रिक भारत में एकीकृत कर दिया गया।

यद्यपि 1890 के दशक तक गांधी जाती व्यवस्था की प्रणाली की अवैधता के प्रति आश्वस्त हो गए थे वे वेदों (ऋग्वेद) और भगवद्-गीता के दर्दनाक तथ्य से अवगत थे। उन्होंने सबसे पहले यह कहा कि वर्ण के रूप में "जाति" अपने वास्तविक रूप में समतावादी थी और जाति में इसका भ्रष्टाचार (जन्म के आधार पर जाति का निर्धारण) वास्तविक वर्ण व्यवस्था का एक भयानक उपहास था। वास्तविक वर्ण व्यवस्था चार विभाजनों के बजाय अब जातियों की एक भीड़ थी और वास्तविक वर्ण व्यवस्था का कानून एक मृत पत्र बन कर रह गया | 1935 तक उन्होंने जाति व्यवस्था के खिलाफ कड़ा रुख अपनाया जिसकी पुष्टि उनके द्वारा प्रकाशित एक निबंध जिसका शीर्षक जाति को जाना है से होती है। तथा अस्पृश्यता की प्रथाओं के खिलाफ अभियान जल्द ही नए सिद्धांत की सबसे महत्वपूर्ण परियोजनाओं में से एक बन गया। हालाँकि, जाति व्यवस्था के शास्त्रीय औचित्य ने अपनी कठिनाइयों को जन्म दिया, जिसने गाँधी जी को शास्त्रों की व्याख्या के नियमों की जांच करने के लिए मजबूर किया। यह मुद्दा तब गंभीर हो गया जब तथाकथित अछूतों (और नए भारतीय संविधान के भावी ड्राफ्ट्समैन) के नेता बी.आर. अम्बेडकर ने हिंदू धर्म को पूरी तरह से त्यागने की धमकी दी और यह तर्क दिया कि स्वयं शास्त्रों की अस्वीकृति से कम कुछ भी नहीं चाहिए।

गांधी ने जाति व्यवस्था से छुटकारा पाने और शास्त्रों की अखंडता की रक्षा के लिए मांग की। उन्होंने तर्क दिया कि शास्त्रों की एक सही व्याख्या यह दिखाएगा कि जाति व्यवस्था केवल ऐतिहासिक थी स्थायी नहीं। यह तर्क उनके द्वारा

नियोजित शास्त्रों की व्याख्या के मानदंडों का अनुसरण करती है। उन्होंने जो मानदंड चुने थे वे थे विवेक, तर्क, शिक्षा, जीवन की पवित्रता और व्याख्या किए जाने वाले सत्यों का आंतरिक अनुभव | तथा गाँधी जी मानते है कि ईश्वर के वचन के रूप में कुछ भी स्वीकार नहीं किया जा सकता है जिसे तर्क से परीक्षण नहीं किया जा सके या आध्यात्मिक रूप से अनुभव करने में सक्षम न हो तथा गांधी जी का कहना था कि हिंदू धर्मग्रंथों की सही व्याख्या की जा सकती है। जिससे समतामूलक समाज का निर्माण किया जा सके। इस दृष्टि से देखा जाए तो भारत में जिस जाति व्यवस्था का विकास हुआ था उसमें केवल ऐतिहासिक स्थायी नहीं बल्कि वैधता भी थी। शास्त्रों की पुनर्व्याख्या जाति व्यवस्था के अंत का आह्वान करेगी। जैसे-जैसे ऐतिहासिक जागरूकता बदलती है, वैसे-वैसे जाति के प्रति दृष्टिकोण भी बदलता है। ऐतिहासिक ज्ञान, आध्यात्मिक अनुभव और ठोस तर्क के संयोजन ने गाँधी जी के पुराने भारतीय राजनीतिक सिद्धांत से जाति व्यवस्था को हटाने के लिए प्रेरित किया।

पुराने सिद्धांत को प्रासंगिक बनाने के लिए नए विचारों की आवश्यकता थी जो ज्यादातर पश्चिम से आए थे। उनमें नागरिक राष्ट्रवाद, सीमित संवैधानिक राज्य, मौलिक मानवाधिकार और आधुनिक राजनीतिक अर्थव्यवस्था के विचार शामिल थे। गांधी के लिए राष्ट्रवाद राजनीतिक समुदाय का एक सिद्धांत था। जाति का स्थान राष्ट्र को लेना था जो शाही विस्तार का क्षेत्र (एक चक्रवर्ती क्षेत्र) उत्तर में हिमालय से लेकर दक्षिण में समुद्र तक एक हजार योजन तक फैला हुआ है। हिंद स्वराज में गाँधी जी ने कहा कि भारतीयों ने एक राष्ट्र का गठन किया है यह तर्क देते हुए कि सभी भारतीयों- हिंदू, मुस्लिम, बौद्ध, जैन, ईसाई, सिख, पारसी, यहूदी और अन्य की यह साझी भावना थी | अर्थशास्त्र पहले से ही भारत के बारे में यह बात कर चुका था |

चौथी शताब्दी ईसा पूर्व के अंत तक भारतीय राजनीतिक विचारों में चार विचार प्रभावशाली स्थिति में थे पहला विज्ञान (विद्या) की बहुलता - उनमें से राजनीति विज्ञान (दंड नीति) को मानव उत्कर्ष के लिए अपरिहार्य माना गया। दूसरा, राजशाही को सरकार के सामान्य रूप में स्वीकार किया जाना। तीसरा चार वर्णों या "जातियों" पर आधारित समाज के पदानुक्रमित क्रम को मानव समाज के सही रूप में समर्थन दिया जाना। और चौथा, राजनीति विज्ञान का समग्र उद्देश्य जीवन के चार महान उदेश्यों (धर्म), धन और शक्ति (अर्थ), आनंद (काम), और आध्यात्मिक अतिक्रमण (मोक्ष) पुरुषार्थों की खोज के लिए आवश्यक सांस्कृतिक परिस्थितियों का निर्माण करना था | कौटिल्य के अर्थशास्त्र में इन विचारों को औपचारिक मान्यता मिली। और साथ में बाद के लेखकों जैसे पांचवीं शताब्दी ईस्वी में कमंदकी, दसवीं शताब्दी में सोमदेव और चौदहवीं शताब्दी में सुक्रानति के लेख, सभी ने ईमानदारी से इन चारो सिद्धांत का पालन किया। भारत के महान महाकाव्य, महाभारत और रामायण थे। मनु के धर्मशास्त्र की तरह ही धर्मशास्त्र परंपरा में भीं इन महाकाव्य के विचार देखने को मिलते है। धर्मनिरपेक्ष संस्कृत साहित्य के प्रमुख लेखक, जैसे कालिदास (पाँचवीं शताब्दी ईस्वी), इन विचारों की वृहद स्थिति के प्रति सचेत थे। इनके महत्व और दीर्घायु को देखते हुए इनका कुछ विस्तार से परीक्षण करना आवश्यक है। हालांकि, मैं मुख्य रूप से अर्थशास्त्र तक जांच को सीमित रखूँगा | अर्थशास्त्र राजनीति विज्ञान की चर्चा को अपने समय में ज्ञात तीन अन्य विज्ञानों की व्यापक चर्चा के साथ प्रस्तुत करता है। राजनीति विज्ञान के प्रति ऐसा समग्र दृष्टिकोण अपने आप में उल्लेखनीय है। प्रस्तुत क्रम में जिन विज्ञानों का उल्लेख किया गया है, वे हैं दर्शन, वेद, अर्थशास्त्र और राजनीति विज्ञान। निहितार्थ यह था कि राजनीति विज्ञान मानव उत्थान के लिए आवश्यक सभी शर्तों को लाने के लिए पर्याप्त नहीं था। उत्तरार्द्ध को उल्लिखित अन्य विज्ञानों के योगदान की आवश्यकता थी और राजनीति विज्ञान शुरू से ही इस पर ध्यान देने योग्य था | मानव के पूर्ण उत्कर्ष के

लिए कितने विज्ञान आवश्यक थे यह अपने आप में एक बहस का विषय था और इन मुद्दों पर बहस हुई थी जो हमें उस समय के बौद्धिक जीवन शक्ति और परिष्कार के बारे में बताता है |

इस पृष्ठभूमि के खिलाफ कौटिल्य अपनी स्थिति को आगे बढ़ाते हुए कहते हैं कि वास्तव में विज्ञान की संख्या चार है। क्योकि उनकी मदद से यह जाना जा सकता है कि आध्यात्मिक इच्छा [धर्म] और भौतिक कल्याण [अर्थ] क्या है, इसलिए विज्ञान को तथाकथित कहा जाता है |

विज्ञान की सूची में दर्शनशास्त्र को प्रथम स्थान दिया गया । दर्शनशास्त्र से तात्पर्य उस अनुशासन से था जो तर्क के माध्यम से सभी विज्ञानों की आंतरिक संरचना की जाँच करता है । दर्शनशास्त्र का उदेश्य विज्ञान की बुनियादी धारणाओं पर सवाल उठाना नहीं था बल्कि तर्कसंगत और बुनियादी धारणाएँ बनाना और स्वयं विज्ञान का विशेषाधिकार दिलाना था । इसके विपरीत, दर्शन की भूमिका यह जांचना था कि किये गए दावे तर्कसंगत रूप से सुसंगत और समझदार थे या नहीं ? इस प्रकार, दर्शन ने तीन विज्ञानों की "शक्ति और कमजोरी" की जांच की वेदों की शिक्षाओं के अनुसार आध्यात्मिक इच्छा और आध्यात्मिक बुराई क्या थी ? अर्थशास्त्र में भौतिक लाभ और भौतिक हानि क्या थी ? और राजनीतिक में अच्छी नीति और बुरी नीति का गठन क्या था ? विज्ञान अर्थात् दर्शन की तकनीकों के बिना किसी भी विज्ञान की सुसंगत समझ संभव नहीं थी । जैसे, ज्ञान की किसी भी शाखा की संपूर्ण और व्यवस्थित समझ के लिए दर्शन एक पूर्व शर्त थी और यह आश्चर्य की बात नहीं है कि कौटिल्य दर्शन की प्रशंसा में प्रभावशाली हैं|

पुराने सिद्धांत की दूसरी उल्लेखनीय विशेषता वेदों के विज्ञान के दर्शन से सम्बंधित है। अर्थशास्त्र में दोनों के बीच किसी भी असंगति सक्रिय शत्रुता का कोई संकेत नहीं है । भेद का अर्थ विरोध नहीं है । दोनों के बीच अनुमानित सामंजस्य भारतीय राजनीतिक चिंतन के प्राचीन सिद्धांत का एक महत्वपूर्ण पहलू है । वह राजनीति विज्ञान जो सत्ता के हितों से संबंधित है | वेदों के विज्ञान की वैधता को पहचानता है | जो भारतीय राजनीतिक दर्शन के पूरे इतिहास पर स्थायी प्रभाव डालेगा | कौटिल्य की सूची में अर्थशास्त्र का विज्ञान तीसरे स्थान पर है और यह अन्य विज्ञानों के बीच अपनी सापेक्ष स्वतंत्रता बनाए रखता है । तथा कौटिल्य विज्ञान के विस्तृत विश्लेषण में नहीं जाते है यह उल्लेख करते हुए संतुष्ट है कि कृषि, पशु प्रजनन और व्यापार धन उत्पादन के सबसे महत्वपूर्ण प्रमुख स्रोत हैं। हालांकि, वह बताते हैं कि घरेलू नीति और विदेश नीति दोनों में सफलता खजाने और अर्थव्यवस्था की ताकत पर निर्भर करती है ।

तीसरा, राजतंत्र सरकार का स्वीकृत रूप है । अपनी घरेलू नीति में सम्राट वर्ण या जाति पर आधारित पदानुक्रमित सामाजिक व्यवस्था को लागू करने के लिए बाध्य है । हालाँकि, अपनी विदेश नीति में वह राज्य के सत्ता हितों को बढ़ावा देने के लिए स्वतंत्र है । तथा यह राज्यों की प्रकृति में है कि वे अपने साम्राज्य का विस्तार करे जीते और अपने अधीन करे | राजनीति विज्ञान अधिग्रहण और विस्तार का विज्ञान भी है । इसमें अपने उद्देश्य के लिए उन चीजों का अधिग्रहण करना जो अपने पास नहीं हैं या मौजूद चीजों का संरक्षण, संरक्षित चीजों की वृद्धि और एक योग्य प्राप्तकर्ता को संवर्धित चीजों का उपहार देना भी है । इस पर सांसारिक जीवन का व्यवस्थित रखरखाव निर्भर है |

चौथा, राजनीति विज्ञान को समाज में एक अनिवार्य सकारात्मक सांस्कृतिक भूमिका निभानी है । क्योंकि जब तक राजनीति विज्ञान द्वारा व्यवस्था और स्थिरता की स्थिति स्थापित नही की जायेगी तब तक अन्य विज्ञान पनपने में

सक्षम नहीं होंगे दर्शन की खोज को सुनिश्चित करने का साधन तीन वेद और अर्थशास्त्र में राजा द्वारा संचालित छड़ है तथा तीन विज्ञानों की जड़ें छड़ के न्यायसंगत प्रशासन में हैं।

अंत में और सबसे महत्वपूर्ण अर्थशास्त्र मानव अस्तित्व के महान लक्ष्यों, पुरुषार्थों की खोज के लिए आवश्यक सांस्कृतिक परिस्थितियों को बनाने का अपरिहार्य साधन है। क्योकि मनुष्य इसके अभाव में भौतिक और आध्यात्मिक सुखो को प्राप्त नहीं कर सकता। अर्थशास्त्र इस बिंदु को इतना महत्वपूर्ण मानता है कि वह इसे कई बार दोहराता है । सबसे पहले, राजा को स्वयं यह प्रदर्शित करके अपनी प्रजा के लिए एक उदाहरण स्थापित करना चाहिए कि पुरुषार्थों का सफलतापूर्वक पीछा कैसे किया जा सकता है। उसे अपने आध्यात्मिक और भौतिक कल्याण का उल्लंघन किए बिना कामुक सुखों का आनंद लेना चाहिए उसे अपने आप को सुखों से वंचित नहीं करना चाहिए। उसे अपने आप को जीवन के तीन लक्ष्यों के लिए समान रूप से समर्पित करना चाहिए जो एक दूसरे से बंधे हुए हैं। क्योंकि, तीनों में से (आध्यात्मिक भलाई, भौतिक सुख या कामुक सुख) किसी एक में अत्यधिक लिप्त होने से खुद को और साथ ही अन्य दो को भी नुकसान पहुंचाता है|

गांधी के राजनीतिक विचार में एक कमी है। इसमें मार्क्सवाद के साथ कोई रचनात्मक संवाद उदारवाद की भांति नहीं है। शायद यह इस लिए दीखता है क्योंकि भारतीय मार्क्सवादियो ने भारत को मार्क्सवाद के अनुसार परिवर्तित करना चाहा जिसपे गाँधी जी की असहमति रही होगी | यह विवाद इस बात का उत्तर है कि भारतीय मार्क्सवाद आधुनिक भारतीय सिद्धांत से बाहर क्यों रहता है | भारत के औपनिवेशिक अनुभव का गांधी का मूल्यांकन अनुकरणीय रहा है, क्योंकि इससे किसी प्रकार का सांस्कृतिक विकार देखने को नही मिलता। उनकी समरसता की भावना इतनी प्रामाणिक थी कि उन्हों ने पश्चिमी विचारों को उत्तर-औपनिवेशिक बदले की भावना के आभाव में एकीकृत किया। यदि उन्होंने पश्चिम से मानव अधिकारों का विचार उधार लिया तो सत्याग्रह के रूप में पश्चिम को ब्याज सहित पूंजी वापस कर दी।

सन्दर्भ सूची

1. Anthony, J. Parel (2008). Gandhi and the Emergence of the Modern Indian Political Canon article: Cambridge University Press.
2. Gandhi, M. K. (2012). Hind swaraj, New Delhi : Raj Pal Prakasan.
3. Gandhi, M.K (1997). Hind swaraj and Other Writings, ed, Anthony J. Parel Cambridge: Cambridge University press.
4. Ghoshal, U.N. (1966). A History of Indian Public Life: Oxford University Press.
5. Joan, V. Bondurant (1967). Conquest of violence:The gandhian philosophy of conflict,revised edition,Berkeley:University of California press.
6. Joseph, H. Carens (2009). A Contextual Approach to Political Theory:springer Press.
7. Kumarappa B., M. K. Gandhi (1984).Ahmedabad Navajivan.
8. Mehta, B.R. (1983). Bhartiye Rajnitik Chintan Ke Adhar,New Delhi:Manohar Prakashan.
9. Parel, A.J (2006). Gandhi's Philosophy and the Quest for Harmony.Cambridge: Cambridge University Press.